पंचम अध्याय

'गिरिराज किशोर के नाटकों में चित्रित सामाजिक चेतना'

पंचम अध्याय

'गिरिराज किशोर के नाटकों में चित्रित सामाजिक चेतना'

चेतना समस्त सृष्टी का आधार है। 'चेतना' शब्द की अवधारणा आधुनिक न होकर अत्यंत प्राचीन है। चेतना सामाजिक वातावरण के संपर्क में विकसित होती है। युग विशेष की अपनी भिन्न चेतना होती है समाज का संबंध किसी देश या काल विशेष में वर्तमान विभिन्न परिस्थितियों, प्रवृत्तियों से जितना गहरा होता है, समाज उतना ही प्रगति शील एवं चेतना संपन्न होता है। प्रत्येक युग में चेतना परिवर्तन होता रहा है।

चेतना शब्द का अधिक प्रयोग मनोविज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में किया जाता है। आधुनिक युग में 'चेतना' शब्द दर्शन, नीतिशास्त्र, समाजविज्ञान, राजनीति, धर्मशास्त्र, अध्यात्म, साहित्य का विषय हो गया है। मानव की प्रमुख विशेषता चेतना है। अर्थात वस्तुओं, विषयों और व्यवहारों का ज्ञान ही चेतना है। आधुनिक युग विज्ञान युग है। इसमें मानव के बौद्धिक विकास के कारण अधिकाधिक परिवर्तन हो रहे है। चेतना का संबंध मानव की आंतरिक शक्ति 'चित' से है। चेतना 'चित' का सकारात्मक दृष्टीकोन होने के कारण इस से बाहय पदार्थों, वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त होता हैं, तथा आंतरिक अनुभूतियों की अवधारणा बनती है। जब हम स्वस्त है शक्तिमान है तब हमें हमारी बुद्धि शोषण का विरोध करने के लिए प्रेरित करती है। यही विचार वैयक्तिक स्तर पर चेतना को जन्म देता है।

इस अध्याय में गिरिराज किशोर के नाटकों में सामाजिक चेतना के अंतर्गत पारिवारिक, दांपत्य, नारी, आर्थिक, राजनीतिक चेतना जैसे अंगों का अध्ययन किया है, क्योंकि इनसे युगीन संदर्भ का साक्षात्कार होकर सामाजिक चेतना का बोध होगा।

5.1 चेतना शब्द का अर्थ -

विविध कोशकारों ने 'चेतना' शब्द को इस प्रकार स्पष्ट किया है -

'नालंदा विशाल शब्दसागर' के अनुसार - चेतना (संज्ञा (स्त्री)) (1) बुद्धी (2)मनोवृत्ति (3)ज्ञानात्मक मनोवृत्ति (4) स्मृति, सुधि (5) चेतना होश।''[1]

आधुनिक हिंदी शब्दकोश - ''चेतना - मन की वह वृत्ति जो जीवा को अंतर एवं बाहय का ज्ञान कराती है, वह स्थिति जो प्राणी के चेतन होने का प्रमाण देती है। संवेदना, संज्ञा, ज्ञान, प्रतिबोध, सजीवता, बुद्धिमत्ता, तर्कनाशक्ति चेतस।''[2]

'राजस्थानी हिंदी शब्दकोश' - ''चेतना - बुद्धि, समझ ज्ञान, चेतनता, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति, जीवन, शक्ति, समझ, शक्ति, होश ।''[3]

'प्रामाणिक हिंदी कोश' - ''चेतना (स्त्री.सं.) बुद्धि, बोध करने की वृत्ति या शक्ति, चेतनता।''[4]

'शिक्षक हिंदी शब्दकोश' - ''चेतना ज्ञानमुलक मनोवृत्ति, बुद्धि, समझ, होश-हवास, स्मृति, याद। 'चेतना' - (1) होश में आना (2) सावधान होना, (3) सोच-समझकर ध्यान देना।''[5]

'मानक हिंदी कोश' में चेतना का अर्थ है - 'चेतना (स्त्री) (1) मन की वह वृत्ति या शक्ति जिससे जीव या प्राणी को आंतरिक (अनुभूतियों, भावों, विचारों आदि) और बाहय (घटनाओं) तत्त्वों या बातों का अनुभव या भान होता है। होश-हवास। (2)बुद्धि, समझ (3)मनोवृत्ति, विशेषतः ज्ञानमुलक मनोवृत्ति (4) याद, स्मृति अ(हि.चेत) (1) संज्ञा से युक्त होना। होश में आना उदा : नैन पसारि चेत धनचेती - जायसी। (2) ऐसी स्थिति में होना की बुरे परिणामों या बातों से बचकर अच्छी बातों की ओर प्रवृत्त हो सके। (3) सावधान या होशियार होना (4) सोच-समझकर किसी बात की ओर ध्यान देना। स.विचारना, समझना, जैस - किसी का बुरा या भला सोचना।''[6]

---

1) सं.श्री.नवलजी - 'नालंदा विशाल शब्दसागर',पृ.388
2) सं.डा.गोविंद चातक - 'आधुनिक हिंदी शब्दकोश', पृ.211
3) स.आ.बदरीप्रसाद साकरिया - 'राजस्थानी हिंदी शब्दकोश, पृ.390
4) सं.रामचंद्र वर्मा - 'प्रामाणिक हिंदी शब्दकोश',पृ.369
5) सं.डॉ.हरदेव बाहरी - 'शिक्षक हिंदी शब्दकोश',पृ.130
6) सं.रामचंद्र वर्मा - 'मानक हिंदी शब्दकोश दूसरा खंड', पृ.274

चेतना का अर्थ बुद्धि या मन की वह विशिष्ट वृत्ति है, जिसके कारण मनुष्य या प्राणी में अनुभूतियों, भावों, विचारों तथा बाहय घटनाओं का अनुभव या जानकारी होती है। सोच समझकर किसी घटना की ओर ध्यान देने की प्रक्रिया को 'चेतना' कहा जाता हैं।

5.2 चेतना की परिभाषा -

विविध कोशकारों द्वारा दिया गया चेतना का अर्थ देखने के बाद हम यहाँ अनेक विद्वानों ने की चेतना की परिभाषा देखेंगे।

1) डॉ.अंबलगे के मतानुसार - "चेतना प्राणी मात्र में निहित वह शक्ति है जो उन्हें निर्जीव और जड़ वस्तुओं से अलग बनाती है। और उन्हें चैतन्यमय बनाकर सजीव सिद्ध करती है।"[7]
2) रामप्रसाद त्रिपाठी ने चेतना के संदर्भ में कहते हैं "जीव धारियों में रहनेवाला वह ऐसा तत्त्व है; जो उन्हें निर्जीव पदार्थों से भिन्न बनाता है। वह मनुष्यों की जीवन प्रक्रियाओं को चलानेवाला तत्त्व है। 'चेतना' स्वयं को और अपने आस-पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।"[8] प्रस्तुत परिभाषा से स्पष्ट है, मनुष्य चेतनायुक्त प्राणी है। वह चेतना से उत्पन्न प्रेरणा के कारण ही कोई कार्य करता है और क्रिया करने से पहले वह उसके परिणामों पर विचार करता है।
3) प्रगतिवादी कवि गजानन माधव 'मुक्तिबोध' चेतना के संदर्भ में कहते है कि - "मानव चेतना की प्रक्रिया, प्राणीशास्त्रीय आधार पर खड़ी होते हुए भी मुलतः मनोवैज्ञानिक है, अर्थात् चेतना की प्रक्रिया के अंतनियम प्राणिशास्त्रीय आधार पर स्थित होते हुए भी उनसे भिन्न है। चेतना के तत्व उनका आधार बाहयगत है, किन्तु उनकी अग्नि और तेज आत्मगत है।"[9]

7.डा.काशिनाथ अंबलगे - संतो और शिवशरणों के काव्य में सामाजिक चेतना,पृ.17

8.सं.रामप्रसाद त्रिपाठी - 'हिंदी विश्वकोश, भाग-4',पृ.242

9. गजानन माधव मुक्तिबोध - कामायनी एक पुनर्विचार,पृ.2

4) मानवीय 'चेतना के बारे में डॉ.राजकुमारी सैनी ने कहा है, "चेतना बोध अथवा अनुभूति की अपेक्षा अधिक विस्तृत अर्थ की संप्रेषक है। वह ऐसी शाश्वत सरिता के समान है जिसमें विभिन्न, बोध, विभिन्न अनुभूतियाँ और विभिन्न स्मृतियाँ बुंद-बुंद के समान आकार धारण करती तिरोहित हो जाती है किन्तु उसका अनन्त प्रवाह अपनी समग्रता के साथ गतिमान रहता है।"[10]

5) डॉ.गुलाबराय हांडे ने चेतना के कारण मानव और पशु में भेद होता है ऐसा माना है उनकी धारणा है, "चेतना वह ज्ञान है जो मनुष्य को पशु जगत से भिन्न करता हुआ अंततः क्रियाशिलता से ही आत्मिक उन्नति प्राप्त करता है। क्रियाशिलता का दुसरा नाम आत्मिक उन्नति है वही चेतना है।"[11]

6) डी.डी.रघुसेन की मान्यता है,"चेतना की परिभाषा नहीं हो सकती। हम केवल अनुभव कर सकते है कि चेतना क्या है? लेकिन दूसरों को नहीं बता सकते।"[12]

5.3 चेतना का स्वरूप -

'चेतना' समाजसापेक्ष होती है। सामाजिक पतनावस्था की विभिन्न प्रतिकुल परिवेश में जिसके प्रभाव से समस्त समाज में नवजागरण की लहर दौड़ जाए, उसी को सामाजिक चेतना का अग्रदूत समझना चाहिए। मानव के मन में चैतन्य सुप्तावस्था में विद्यमान रहती है, परंतु रूढ़ि, अज्ञान, अशिक्षा और अभावों के परिणाम स्वरूप यह कुंठित हो जाती है। इस कुंठा से मुक्ति का प्रयास ही चेतना है।

मानव समाज में अमानवीय प्रवृत्तियों, शोषण, भ्रष्टाचार, अनाचार, दुराचार, निर्धनता, अज्ञान आदि को समाप्त करने के लिए मानव में चेतना की उत्पत्ति का होना महत्त्वपूर्ण माना जाता है। डॉ.रत्नाकर पांडेय का चेतना के संदर्भ में कथन है, "चेतना सामाजिक वातावरण के सम्पर्क से विकसित होती

10.डॉ.राजकुमारी सैनी - पन्त की सौन्दर्य चेतना का विकास, पृ.48
11.गुलाबराय हाडे -मन्नु भंडारी का कथा साहित्य,पृ.125
12.डी.डी.रघुसेन - डिक्शनरी ऑफ फिलॉसॉफी,पृ.44

है। वातावरण के प्रभाव से व्यक्ति नैतिकता और उचित व्यवहारिकता प्राप्त करता है। चेतना और मनुष्य के सामाजिक चरित्र में मौलिक संबंध है क्योंकि मनुष्य केवल चेतना से उत्पन्न प्रेरणा के कारण ही कोई भी कार्य करता है। चेतना वह विशेष गुण है, जो मनुष्य को जीवित बनाती है और चरित्र वह सामाजिक संगठन है, जिसके द्वारा वास्तविकता व्यक्त होती है।''[13]

जड़ रूढ़ियों और मृत परंपराओं का गला घोट कर मानव नई दिशा की ओर बढ़ने का प्रयास करता है, तब यह स्वीकार किया जाता है कि उसमें जाग्रति उत्पन्न हुई है। विविध क्षेत्रों में चेतना का स्वरूप अलग-अलग परिलक्षित होता है। व्यक्तिगत चेतना, आर्थिक चेतना, सामाजिक चेतना, धार्मिक चेतना, ऐतिहासिक चेतना, भौगोलिक चेतना, मनोवैज्ञानिक चेतना आदि प्रकारों में चेतना का वर्गीकरण किया जा सकता है।

सामाजिक चेतना में राजनीति,धर्म,साहित्य आदि तत्त्वों का समावेश होता है। जिस समाज में रूढियों, परंपराओं, विसंगतियों से जुझने की जितनी अधिक शक्ति विदयमान होती है, वह समाज उतना ही चेतनायुक्त होता है। डॉ.कुसुम चतुर्वेदी के अनुसार, 'चेतना मनुष्य को सदैव प्रभावित और उद्वेलित करती है। जो कुछ नहीं है उसे पाने की चेतना और जो कुछ है उसे बचाने की चेतना।''[14] चेतना वह तत्त्व है, जिसमें ज्ञान की और व्यक्ति की क्रियाशीलता की अनुभूति होती है।

5.4 सामाजिक चेतना -

सामाजिक जीवन का हर पहलू सामाजिक चेतना से प्रभावित रहता है। डॉ.गुप्ता के अनुसार ''सामाजिक चेतना एक बहुरूपी परिघटना है जो निरंतर विकसित और परिवर्तित होती रहती है।''[15] सामाजिक चेतना विचारधारा का रूप

---

13. डा.रत्नाकर पांडये - 'हिंदी साहित्य : सामाजिक चेतना', पृ.158

14. सं.कुसुम चतुर्वेदी - 'नया मानदंड', अक्तुबर-दिसंबर-1999,पृ.1

15. डॉ.चमनलाल गुप्ता - यशपाल के उपन्यास - सामाजिक कथ्य,पृ.17

ले लेती है जिसके माध्यम से सामाजिक संबंधों में बदलाव, सामाजिक व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन संभव होते है। सामाजिक जीवन के सभी अंतर्विरोधों को समाप्त करने में सामाजिक चेतना की सक्रिय भूमिका रहती है। सामाजिक चेतना व्यक्ति मूलक और समाजमूलक दोनों रूपों में रहती है। जिस समाज में रूढ़ियाँ, परंपराएँ, विकृतियाँ, विसंगतियासँ है वहाँ सामाजिक परिवर्तन के कारण चेतना की उत्पत्ति स्वाभाविक ही होती है।

सामाजिक चेतना ही मानव मस्तिष्क को विचारों की क्षमता प्रधान करती है। मानव मस्तिष्क सामाजिक चेतना से प्रभावित होकर समाज के विषय में सोचता है। सामाजिक चेतना से ही मानव को ज्ञान, संस्कृति एवं विचारधारा आदि की प्राप्ति होती है। पहली अवस्था में उपर से शांत दिखाई देनेवाले शोषित, पीड़ित और अभावग्रस्त मानव के मन में क्रोध और घृणा उमड़ती है, दूसरी अवस्था में शोषित मानव की घृणा, विद्रोह, जुलूस हडताल तथा हिंसा में प्रयुक्त होती है। परिणाम स्वरूप मनुष्य चेतित होकर समाज व्यवस्था और अन्याय, अत्याचार का विरोध करता है। अनेक कारणों से सामाजिक चेतना जाग्रत होती है। इसमें पुरानी आदतों से मुक्ति और नई आदतों के मुक्त स्वीकार में ही चेतना का विकास परिलक्षित होता है।

डॉ.देवेश ठाकुर के अनुसार "सामाजिक चेतना के माध्यम से समाज में व्याप्त प्रतिकुल परिस्थितियों के समाहार का ही प्रयत्न नहीं होता, बल्कि वह नए ज्ञान से पोषित किसी नयी विचारधारा में व्यवहरित होकर समाज की प्रगति में सहयोग देती है तो यह नयी प्रगति ही सामाजिक चेतना कहलाती है।"[16]

सामाजिक चेतना प्रक्रिया मानविय हितों के लिए जरूरी है। समाज में परिवर्तन होने पर मनुष्य के आचार, विचार, रहन-सहन आदि सभी क्षेत्र में विकास हो जाएगा जिससे मनुष्य की प्रगति हो सकती है। सामाजिक चेतना से ही मानव को ज्ञानी, सुसंस्कृत, विचारक बनना है। सामाजिक, वैचारिक क्रांति की आवाज को बुलंद करने का महान कार्य गिरिराज किशोर ने अपने साहित्य द्वारा

---

16. डॉ.देवेश ठाकुर - साहित्य की सामाजिक भूमिका,पृ.10

किया है। उन्होंने भारतीय समाज के उस चित्र को अभिव्यक्ति दी हैं, जो हर स्तर पर चेतना जाग्रति लाने के लिए समाज को प्रेरित करती रहेगी। शोषण का विरोध कर अपने हक्क और अधिकार के लिए लडने की प्रेरणा दी है।

5.4.1 पारिवारिक चेतना -

सामाजिक संरचना की प्रमुख इकाई है - परिवार। आपसी संबंधों से परिवार बनता है। परिवार में व्यक्ति का विकास, उसके अस्तित्व की रक्षा, संस्कार, लालन,पालन आदि सभी कार्य होते है। परिवार केवल रक्त संबंध से नहीं आपसी प्रेम, स्नेह, ममता, आदर से बनता है। दिल से दिल का रिश्ता जोडता है। परिवार में रहते वातावरण के बदलाव से हमारे मन में जाग्रति निर्माण होती है। व्यक्ति के अंत क्रियाओं का क्षेत्र अत्यंत विशाल है। यह व्यक्तिगत भावना, संस्कार, रूढ़ी-परंपरा, शिक्षा से प्रभावित रहता है। बढ़ते जीवन संघर्षों ने आज परिवार का सारा रस, माधुर्य, उल्लास तथा अपनापन खो दिया है।

युगीन परिवेश, नई मानसिकता, व्यावहारिकता एवं आत्मकेंद्रीत प्रवृत्ति के कारण पारिवारिक रिश्तों में परिवर्तन होता जा रहा है। स्वार्थ और भौतिक सुविधाओं के कारण एकता नहीं अनेकता आ रही है। पारिवारिक रिश्तों में बदलाव के कारण पारिवारिक चेतना आ जाती है।

गिरिराज किशोर के 'नरमेध' नाटक में इंद्रराव का पुरा परिवार शिक्षित और आधुनिक विचारोंवाला है। अपने प्यार को लेकर रंजन और वंदु के अपनी माँ तारा के साथ विचार नहीं मिलते। तारा खुद के अनुभव के कारण वंदु और रंजन के प्यार का विरोध करती है। जिसके कारण परिवार में मानसिक घुटन की स्थिति पैदा हो जाती है। वंदु मजबूरन अपने प्यार का त्याग करने का निर्णय लेता है। वह चिठ्ठी में लिखता है, ''मुझे बार-बार माँ और वंती बराबर-बराबर खड़े नजर आते हैं सोचता हूँ माँ नहीं चाहती तो वंती को माँ के साथ नहीं खड़ा होना चाहिए। मैं इस बात से ऐग्री करता हुं। मैं उसे वहाँ से हटा देता हुं।''[17] वंदु माँ कि

17.गिरिराज किशोर - 'नरमेध',पृ.47

खुशी के लिए अपने प्यार वंती को छोड़ देता है। परिवार के लिए वह ऐसा करता है।

'प्रजा ही रहने दो' इस नाटक में धृतराष्ट्र और गांधारी के समान अपने ही परिवार में सत्ता नियंत्रित करने का प्रयास आज भी हमें दिखाई देता है। पीढ़ी का अंतराल सदैव ही टकराता है यही स्थिति गिरिराज किशोर के इस नाटक में चित्रित हुई है। परंपरा और आधुनिकता में टकराव की स्थिति के कारण पारिवारिक चेतना महाभारत काल से आज तक इसी भाँति चली आ रही है। सुयोधन के प्रस्तुत कथन से पीढ़ी के वैचारिक अंतराल का पता चलता है। सुयोधन - ''मुझे बार-बार लगता हैं ये परंपराएँ, ये गुरूजन, सब मेरी पीठपर उखड़े गाछ की तरह टिके हैं। न मैं उन्हें उचार कर ही फेंक सकता हूँ और न अपने अनुभव की धरती में उन्हें फिर रोप ही सकता हूँ।''[18] सुयोधन के इस कथन से युवा पीढी का विद्रोह झलकता है।

गिरिराज किशोर ने अपनी रचनाओं में पारिवारिक रिश्तों में आए बदलाव पर प्रकाश डालकर बदलती समाज व्यवस्था की ओर अंगुली निर्देश किया है। प्राचीन भारत हो या आधुनिक भारत समाज व्यवस्था सामाजिक प्रवृति यही रही है। संघर्ष, विद्रोह ही उसका आधार है।

5.4.2 दांपत्य चेतना -

पति-पत्नी का संबंध शाश्वत और जन्मजन्मांतर का माना जाता है। किंतु अनेक कारणो से आज पति-पत्नी के बीच दुरियाँ पैदा हो गयी है। कही एक साथ रहकर भी पति-पत्नी के बीच वैचारिक खाईयाँ दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। एक दूसरे के प्रति प्रेम, विश्वास, संतोष न होने से उनमें अलगाव की भावना उत्पन्न हो गई है। इस बारे में अस्थाना जी का मत है, ''पति-पत्नी का एक-दूसरे से प्रेम करना, एक दूसरे के लिए प्रतिबद्ध रहना, त्याग करना आदि बातें आज थोथी, भावुकता और रोमाठिहक बोध माना जाता है।''[19] किसी एक का दूसरे पर अधिकार चलाना दांपत्य जीवन की सरलता नष्ट कर देता है। अपने अस्तित्व

18.गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो',पृ.80

19.डॉ.ज्ञान अस्थाना - 'हिंदी कथा साहित्य समकालीन संदर्भ, पृ.51

हक्क, सत्ता, अहम एवं अधिकार के कारण दांपत्य जीवन में परिवर्तन हो रहा है।

'नरमेध' नाटक में पति-पत्नी के संबंध को विवशता निभाते इंद्रराव और तारा का चित्रण हुआ है। तारा पूर्व प्रेमी नरेन के कारण पति इंद्रराव के साथ खुश नहीं रहती। इंद्रराव कहते है, "मैं तो अकेला ही रहा हुँ। कभी कुछ कहने का मौका ही नहीं मिला हमेशा इनका दुःख ही बड़ा लगता रहा। अगर ऐसा न करता तो मैं अपने अकेलेपन को छोटा न कर पाता। इस सबके बावजूद इनकी जिंदगी को तो आसान नहीं कर पाया, अपना खालीपन जरूर बढ़ा लिया। इसका अंत क्या होगा, अच्छी तरह समझ रहा हूँ। घोर अकेलापन। बर्तनों के टकराहट की आवाज के सिवाय कोई आवाज नहीं सुनाई पड़ेंगी। उसके लिए मैं तैयार हो चुका हूँ।"[20] इंद्रराव का यह कथन पति-पत्नी के मानसिक घुटन को दर्शाता है, जो पत्नी को सुखी रखने के लिए खुद दुःख सहने के लिए तैयार है।

'प्रजा ही रहने दो' में युधिष्ठिर अपने गलत दांव से अपनी पत्नी को हारता है। और युद्ध में भी द्रौपदी के सभी संबंधियों को यहाँ तक की पांचों पतियों से प्राप्त पाँचों पुत्रों को भी खो देता है। इस कारण अपने आपको पत्नी का दोषी समझता है। द्रौपदी भी अपने पति युधिष्ठिर को बार-बार व्यंग्यपूर्ण बातें कहती है। तब युधिष्ठिर अपमानित भाव महसूस कर द्रौपदी से कहता है कि "मैं तब भी तुम्हारा दोषी था जब युद्ध से बचना चाहता था और अब भी तुम्हारा दोषी हूँ जब युद्ध लड़कर विजयी हुआ हूँ। तब तुम ब्राम्हण कहकर अपमानीत करती थी अब महाराज कहकर अपमानीत कर रही हो।"[21] यहाँ द्रौपदी की विद्रोह चेतना स्पष्ट होती है। साथ ही पति की विवशता, अपमानीत मनोवृत्ति भी दिखाई देती हैं।

'घास और घोड़ा' इस सामाजिक नाटक में पंडित ख्यालीराम की पत्नी अपनी बेटी से बाते करते समय कहती है, "अरे तेरे बाप ने कम नहीं पढ़ा। बड़े-बड़े हाथ जोड़े खडे रहते हैं, पर मैं आज भी कह दूँ, उल्टे लटके जाओं तो उल्टे लटक जाएँ और कह दूँ, सीधे लटक जाओं तो सीधे लटक जाएँ।"[22] यहाँ

20.गिरिराज किशोर - 'नरमेध',पृ.56
21.गिरिराज किशोर- 'प्रजा ही रहने दो', पृ.133
22.गिरिराज किशोर - 'घास और घोड़ा',पृ.26

पंडित ख्यालिराम की पत्नी अपने पति पर हक्क चलाती चित्रित हुई है। आधुनिक युग में ज्यादातर स्त्रियाँ अपने पति पर हक्क और अधिकार चलाती है। उन्हें अपने विचारों के अनुसार चलने के लिए विवश करती है ये एक दांपत्य जीवन में परिवर्तन ही है।

'जुर्म आयद' इस नाटक में आशा अपने पति के खिलाप विद्रोह चेतना का प्रतिक है। आशा अपने पति के साथ खुश नहीं है। उसका पति अपने फायदे के लिए अपनी पत्नी का इस्तेमाल करना चाहता है। उसे अपने सेक्रेटरी साहब के पास भेजना चाहता है। तब आशा अपने पति का विरोध करती हुई कहती है, "मैं वहाँ नहीं जाऊंगी.... नहीं जाऊंगी। तुम्हारे लाइसेंस के लिए मैं वह सब नहीं करूंगी.... जो तुम चाहते हो।"[23] आशा अपने पति की बात मानने से साफ इंकार करती है। यहाँ आशा का आत्मसम्मान और स्त्रीत्व जाग्रत होता नजर आता है। जिस कारण वह पति के खिलाप विद्रोह के लिए चेतित हो जाती है। आशा अपने पति का विरोध कर के स्त्री के स्वाभिमान की रक्षा करती है। ये भी दांपत्य जीवन में एक प्रकार से चेतना ही है। यहाँ नारी का अबला रूप न रहकर सबला, दामिनी, दुर्गा यही रूप प्रभावी लगता है जो 'स्वत्व' की रक्षा करता है।

5.4.3 नारी चेतना -

नारी प्रकृति से ही सहनशील, शोषिक होने के कारण अन्याय तथा अत्याचार सहती है। असहाय, अन्याय होने पर उसमें संघर्ष चेतना जाग्रत होती है। नारी अपने अस्तित्व तथा अधिकार के लिए सजग हो गयी है। शोषित जीवन के खिलाप अब वह विरोध करती है। आज की नारी अपनी स्वतंत्रता को सुरक्षित रखना चाहती है। इसी कारण वह आजीवन बंधन तोडकर आजाद भी हो रही है। स्त्री की आत्मनिर्भरता ने पुरूष के साथ उनके संबंधों को बदला है। जीवन की सारी जटिलताओं, अभावों एवं विसंगतियों को झेलते हुए प्रतिकुल परिस्थितियों में आज की नारी ने अदम्य जिजीविषा को स्वीकार किया है। आज की स्त्री संघर्ष-शील है। डॉ.भीमराव पाटिल के मतानुसार, "शिक्षा से प्रभावित नारी आज

---

23. गिरिराज किशोर - 'जुर्म आयद', पृ.35

सामाजिकता के भय को एवं पुराने रीति-रिवाजों को लांघना चाहती है।''[24] वह निरंतर मानसिक एवं सामाजिक घुटनों से मुक्ति का प्रयास कर रही है। लेकिन नारी पूर्णतः शोषण से मुक्त नहीं हो पाई है। नारी जीवन आधुनिक काल के आरंभ से ही नव जागरण तथा नारी मुक्ति आंदोलन के परिणामों से प्रेरित एवं प्रभावित रहा है।

'नरमेध' इस नाटक की वंती पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित आधुनिक विचार वाली लडकी है। इस कारण वह अपने प्यार के बारे में खुले विचारों से अपने माँ-बाप से बातें करती है। ऐसे ही एक दिन वह तारा को भी कह देती है, ''आपके जमाने में ज्यादा-से-ज्यादा दो से प्रेम किया जा सकता था। हम लोग उससे आगे निकल गए है। तीन तक तो आसानी से मुँड लेते है। चार-पाँच की बात हो तो भी हिम्मत नहीं हारते। उम्र की भी कोई लिमिट नहीं। पचास-पचपन तक छूट है। वह कई एंगिल से प्यार रमता है।''[25]

वंती के ये स्वतंत्र विचार आधुनिक नारी के वैचारिक परिवर्तन को स्पष्ट करते है। जो परंपरा से चले आए सीमित दायरे को तोडकर उससे आगे बढने की सोचती है।

'प्रजा ही रहने दो' इस नाटक में द्रौपदी के विद्रोह एवं प्रतिशोध का चित्रण हुआ है। जिसे जुए में हारने के बाद भरी सभा में विवस्त्र करने का आदेश शकुनी देता है। इस अपमान के कारण उसके मन में इस व्यवस्था के विरूद्‌ध चेतना जाग्रत होती है। वह कहती है कि, ''आप सब आश्चर्य कर रहे होंगे कि बहू इतनी वाचाल हो गई।...जब मनुष्य के पास गँवाने को लाज भी नहीं रह जाती, तो उसके पास वाचाल हो जाने के अतिरिक्त कुछ नहीं बचता।''[26] द्रौपदी का यह कथन आत्मचेतना का प्रमाण है। द्रौपदी यहाँ घायल शेरनी का रूप लगती है। द्रौपदी अपने आप को राजमहिषी के सिहांसन पर बैठने के उपयुक्त नहीं समझती क्योंकि अपने अपमान का बदला लेने में भी उसने अपने पुत्रों, भाई-भतीजों सब को

24.डॉ.भीमराव पाटिल - आठवें दशक की हिंदी कहानी में चेतना के विविध आयाम,पृ.75

25.गिरिराज किशोर - 'नरमेध',पृ.48

26.गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.104

खोया। लज्जा तो वह पहले ही खो चुकी थी। द्रौपदी का विद्रोह बडा ही मार्मिक है। द्रौपदी राजनारी होकर भी शोषित रही है तो आम नारी की स्थिति कैसी होगी इस पर भी यहाँ निर्देश किया है।

'केवल मेरा नाम लो' इस मनोवैज्ञानिक नाटक में रजनीकांत कुंठित भावना के कारण अपनी बेटी सुलभा को अपना नाम लेने के लिए कहता है। वह बेटी को पत्नी की जगह देखता है। पर सुलभा पढ़ी-लिखी, सुसंस्कारी लडकी होने के कारण अपने पिता का नाम नहीं लेना चाहती। इस कारण वह आपने पिता को नाम लेने के लिए विरोध करती है, इस बात से क्रोधित होकर रजनीकांत उसे पिटने लगते है, तब वह कहती है, "मार लीजिए... जी भरकर मार लीजिए पापा! मैं आपकी बेटी हुँ... बेटी ही रहुँगी।"[27] सुलभा मार सहने के लिए तैयार रहती है पर पिता का नाम नहीं लेती। पिता के खिलाप विरोध करती है। यहाँ उसका स्वाभिमान स्पष्ट चित्रित हुआ है।

'जुर्म आयद' इस नाटक में अनपढ़ उम्मेदीपर परिवारवाले और पुलिस दरोगा दोनों अत्याचार करते है। तब असहाय होकर भी उम्मेदी दोनों का विरोध करती है। उम्मेदी की असहायता देख दरोगा उसके साथ जबरदस्ती करने का प्रयास करता है, तब उम्मेदी उसे धमकाती है, "देख दरोगा जी, मैं तो अपने लेक्खे मरी पड़ी.... कहों दुं अक बस मेरे से दूर रह! अब के अकेल्ली नी डूबने की... यो समझ ले।"[28] उम्मेदी अपनी इज्जत बचाने के लिए दरोगा को अपनी जान देने के लिए धमकाती है। वह अपनी जान से ज्यादा अपनी इज्जत को महत्त्व देती है।

नारी चेतना किसी एक बात से नहीं होती। घर, परिवार, स्वाभिमान, अपमान, इज्जत, प्यार आदि अनेक भावनाओं को बचाने हेतु नारी में चेतना जाग्रत होती है। चाहे द्रौपदी हो या उम्मेदी इतिहास गवाह हैं जब नारी को अपमानीत किया गया तब-तब सृष्टी की हानि हुई है। रामायण, महाभारत इसी का प्रमाण है।

27.गिरिराज किशोर - 'केवल मेरा नाम लो', पृ.284

28. गिरिराज किशोर - 'जुर्म आयाद', पृ.15

5.4.4 भ्रष्टाचार का विरोध -

वर्तमान युग में इतने आर्थिक संकट होते हुए भी अपनी नैतिकता की रक्षा करते हुए भ्रष्ट नीति को ठुकरानेवाले लोग भी समाज में मौजुद हैं जो रूपयों को बिलकुल महत्त्व नहीं देते। अपना आचारण गिरने नहीं देते आजकल हर एक क्षेत्र में भ्रष्टाचार हो रहा है। भ्रष्टाचार के बीना कोई काम नहीं होता। इस कारण लोग अपने अच्छे बुरे काम कराने हेतु भ्रष्ट नीति अपनाते है और रिश्वत देकर अपना काम जल्द से जल्द पूरा कराने की कोशिश करते है। लेकिन ऐसे भी अफसर है जो किसी भी काम के लिए किसी भी प्रकार का भ्रष्टाचार नहीं करते। ऐसे ही एक पात्र रजनीकांत का चित्रण गिरिराज किशोर जी ने अपने 'केवल मेरा नाम लो' इस नाटक में किया है।

मिस्टर और मिसेज चामड़िया अपनी फाईल का काम करने हेतु रजनीकांत के घर आते है। वहाँ वे रजनीकांत को रहने के लिए अपना बंगला देने की बात करते है। साथ रहकर उनकी सेवा करने की बात कहते है। मिस्टर चामड़िया बातों-बातों में रजनीकांत के सामने रुपए रख देता है। ताकि बंगला और रुपयों की लालच में रजनीकांत फाईल का काम कर दे पर रजनीकांत इस काम के लिए साफ इंकार कर देता है वह कहता है, "आप जा सकते है... जा सकते है। मजबुर हूँ... मेरे हाथ बाँधे हैं। आपके रुपयों की यह धमकी मुझे अपने निर्णय से नहीं डिगा सकेंगी।"[29] रजनीकांत उन दोनों को काम किये बिना घर से निकाल देते है। साथ ही उनके रिश्वत को भी लेने से इंकार करता है। ठुकराता है। हमारे समाज में रजनीकांत जैसे ईमानदार अफसर मौजूद है जो रिश्वत नहीं लेते। भ्रष्टाचार एक गंभीर समस्या है। उसके विरोध मैं आवाज उठानी चाहिए ये रजनीकांत के चरित्र से स्पष्ट होता है।

5.4.5 जातीय संघर्ष -

भारतीय समाज में जातीयता को बहुत महत्त्व दिया हैं। जातीयता के कारण लोगों में उच्च और निम्न जैसे भेद पैदा हो गए है। किसी भी मनुष्य को अपनी

---

29. गिरिराज किशोर -'केवल मेरा नाम लो', पृ.256

जाति का अभिमान होता है। हम आज इक्कीसवीं सदि की ओर बढ़ रहे है फिर भी लोगों में जातीयता की भावना पनप रही है। जिसके कारण जातिवाद के नाम पर दंगे-फसाद हो रहे है। इसमें उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों का शोषण करते है उनमें जातीयता की भावना जाग्रत होकर संघर्ष हो जाता है। सामाजिक स्वास्थ्य में जाति ही अवरोध होने के कारण इसे जड़ से उखाडने का कार्य समाजसुधारकों ने किया है।

गिरिराज के 'प्रजा ही रहने दो' इस नाटक में ऐसे ही संघर्ष को स्पष्ट किया गया है। इसमें कृष्ण के बारे में गांधारी का कथन है, "राजसूय यज्ञ के समय महात्मा भीष्म के होते हुए उसने पाण्डवों से अपने चरणों की पूजा कराई थी। शिशुपाल ने ठिक ही तो कहा था : न वंश, न जाति और न कुल...। इसी बात पर कृष्ण ने उसका वध कर डाला था। शक्ति छोटों को बड़ा बना पाए या न बना पाए पर ओछा अवश्य बना देती है।"[30] गांधारी के कथन से स्पष्ट होता है कि कृष्ण जाति, वंश पर की गई चोट से घायल हो जाती है। इसी कारण कृष्ण शिशुपाल का वध कर देता है। कृष्ण को शिशुपाल की जान से ज्यादा अपनी जाति महत्त्वपूर्ण लगती है। जिसपर शिशुपाल व्यंग्य करता है। वंश, जाति के प्रति कृष्ण के मन में जगी चेतना यहाँ दिखाई देती है। कृष्ण को अपनी वंश जाति का स्वाभिमान स्पष्ट होता है।

5.5 आर्थिक चेतना -

वास्तव में मानवीय जीवन में 'अर्थ' की महत्ता निर्विवाद है। अर्थ के बारे में अस्थानाजी के विचार है, कि "आधुनिक युग में जब कि विकास की सारी शक्तियाँ विज्ञान और उदयोग में केंद्रित हो गई है, विकास का आधार 'अर्थ' रहा है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि आज के प्रगतीन्मुख जनजीवन में उन्नयन के सारे साधन अर्थ में निहित है।"[31] इस अर्थ जनित यथार्थ ने जीवन के विविध आयामों को प्रभावित किया है। अर्थ के कारण मनुष्य ज्यादा दुःखी रहता है।

30.डॉ.गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो',पृ.111

31.डॉ.ज्ञान अस्थाना - 'हिंदी कथा साहित्य, समकालिन संदर्भ',पृ.29

जीवन में अर्थाभाव ज्यादातर सामान्य व्यक्ति अथवा समाज के निम्न स्तरीय जीवन जीनेवाले व्यक्तियों को ही भोगना पडता है। आर्थिक विषमता का प्रभाव पारिवारिक और सामाजिक संबंधों पर होता है। इस प्रभाव के परिणाम स्वरूप सामाजिक जीवन में सुक्ष्म एवं जटिल परिवर्तन दिखाई देता है। इस बारे में कीर्ति केसर का मत है, ''हमारे सभी सामाजिक संबंधों और पारिवारिक रिश्तों पर अर्थतंत्र हावी हो गया है।''[32] यही अर्थतंत्र आज जीवन मूल्य बन गया है। इस चेतना पर भी गिरिराज किशोर ने कलम चलाई है। ?

'घास और घोड़ा' इस नाटक में आर्थिक कमी की भावना से त्रस्त ख्यालिराम का चित्रण हुआ है। पंडित ख्यालिराम के घर की स्थिति ठीक नहीं है। एक दिन पंडित ख्यालिराम के घर रिश्ता लेकर पाठशाला के अध्यक्ष पंडित हजारीलाल आते है। तब पंडित ख्यालिराम को उनके घर की हालत देखकर सोचते है,''इतने बड़े आदमी को ऐसी व्यवस्था में बिठाना ठिक नहीं। वे अपनी पत्नी से कहते है कि घर की व्यवस्था ठीक कर लों। अपनी पाठशाला के अध्यक्ष विधान परिषद के सदस्य, मुख्यमंत्री जी के निकटतम सहयोगी श्रीमान पं.हजारीलाल जी तुम्हारे सुपुत्र चिरंजीव द्वारिकानाथ शर्मा से अपनी सुकन्या का संबंध लेकर आ रहे है। तुम ही बताओं क्या इतने बडे व्यक्ति को इसी कुव्यवस्था के बीच बैठाएँगे?''[33]

पंडित ख्यालिराम अपने घर आनेवाले है इसकारण परेशान होकर अपने घर की हालत ठीक करने लगते है। पंडित हजारीलाल की खातिरदारी हेतु वे पडोसवालों के यहाँ से कुर्सी-मेज मँगवा लेते है। मेहमान के सामने पहनने के लिए अच्छे कपडे भी नहीं है। इस लिए जो पुराने कपडे है उन्हें ही लोटे में अंगारे लेकर सलवट निकालकर पहनते है। आर्थिक आभाव के कारण उनके पास पूरी व्यवस्था नहीं हो पाती। फिर भी वे हजारीलाल के आने की खुशी में अपने घर की हालत सुधारने की कोशिश करते है।

32.डॉ.कीर्ति केसर -'समकालीन कहानी के विविध संदर्भ',पृ.39
33.गिरिराज किशोर - 'घास और घोड़ा', पृ.28

आर्थिक अभाव के कारण मनुष्य को बहुत से मुस्किलों का सामना करना पड़ता है। साथ ही उनके मन में एक प्रकार की हीन भावना उत्पन्न हो जाती है। तब वे आर्थिक स्थिति में परिवर्तन करने का प्रयास करते है। चाहे वह मेहनत से हो या भ्रष्टता से मनुष्य आर्थिक संपन्नता को पाने के प्रयास करता रहता है। यह एक प्रकार से चेतना ही हैं, जो मनुष्य को प्रयासशील बना देती है। 'दिखावटपन, झूठी प्रतिष्ठा के मापदंड से पीड़ित मध्यवर्गीयता की मानसिकता यहाँ दिखाई देती है।

5.6 राजनीतिक चेतना -

सामाजिक चेतना के साथ राजनैतिक चेतना का स्थान प्रमुख है। राजनैतिक विचारधारा के रूप में व्यक्त होती है। आधुनिक युग में राजनीति में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो रहा है। वर्तमान राजनीतिक परिवेश आतंकयुक्त और जहरीला बन गया है। राजनीति अपना सही अर्थ खो चुकी है। आज की राजनीति से मानवीय संवेदना नष्ट हो रही है। सत्ता प्राप्ति एवं उसे बनाए रखने के लिए अनैतिक मार्ग अपनाए जा रहे है। भ्रष्ट नेता सत्ता हासिल करने के लिए तमाम अवैध कार्य करते है। मानवतावाद एवं राष्ट्रीय हीत की भावना लुप्त हो रही है। नीतिविहीनता के खिलाप जनता में चेतना जाग्रत हुई है। समाज सेवा का बहाना बनाकर अपने स्वार्थपूर्ति हेतु नेतागिरी का नकाब ओढ लेते है। राजनीति जन सामान्य के जीवन को सीधे प्रभावित करनेवाला एक अपरिहार्य अंश बन चुकी है। राजनीति के बारे में गुप्त जी का विचार है,"उन्नत राजनैतिक विचार अर्थतंत्र के विकास में और इसी के अनुकूल सामाजिक जीवन के अन्य पहलुओं के विकास में एक संगठनकारी एकताकारी तथा परिवर्तनकारी भूमिका अदा करते है।"[34]

राजनीतिक चेतना साहित्य का मूल भाव मानते हुए डॉ विश्वंभर उपाध्याय ने कहा है,"राजनीतिक चेतना साहित्य का स्थायी मूल्य बन सकती है - बनी है। राजनीति यदि वास्तविक पात्रों और परिस्थितियों का बहुआयामी चित्रणों के माध्यम से व्यक्त हो जो वह साहित्य को प्रासंगिक बना सकती है। जन नियति

34. डॉ.चमनलाल गुप्ता - 'यशपाल के उपन्यास - सामाजिक कथ्य', पृ.78

बदल सकती है।''[35] देश का प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से राजनीति से प्रभावित होता है। गिरिराज किशोर ने अपने 'प्रजा ही रहने दो' और चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' नाटक में राजनीति की परिवर्तित स्थिति को स्पष्ट किया है।

'प्रजा ही रहने दो' इस नाटक में राजनीतिक चालों को उजागर करते हुए आज के राजनीतिक स्थिति को दर्शाया है। आज भी हमारे राजनीतिज्ञ सत्ता प्राप्ति के लिए कुटिल चालों का इस्तेमाल करते है। और अपनी सत्ता बनाये रखने के लिए अनैतिकता अपनाते है। इस नाटक के कथानक, चरित्र एवं घटनाओं के माध्यम से युगीन राजनीति के भ्रष्टता का चित्रण मिलता है। शासक की अंधी नीतियाँ जो जुआ तक को राष्ट्रीय खेल घोषित कर दे वर्तमान राजनीति में आंतरराष्ट्रीय पहचान के लिए देश की अवहेलना, न्यायपालिका के निर्णयों के विरूध्द घोषित, नीतियों आदि को प्रकट करती है।

मनुष्य की नियति मात्र सत्ता के आदेशों का पालन करना बन गई है यही लगता है। यह उद्‌घोषक के कथन से स्पष्ट होता है,''राजाओं से अधिक आवश्यक काम कौन-सा हो सकता है। राजाज्ञाँए ही पुरे समाज को संचलित करती है।''[36] आज के शासक वर्ग की निरंकुश प्रवृत्ति भी महाभारत युग की राजनीति की भाँति कुटनीति पर टिकी है। सत्य के प्रतीक युधिष्ठिर पर असत्य एवं कुटनीतिज्ञ शकुनि की विजय आज के भ्रष्ट एवं चरित्रहीन राजनेताओं की होनेवाली वाहवाही को प्रकट करती है। यह नाटक आज के वर्तमान की राजनीति को मूल्यहीनता को उजागर करता है।

गिरिराज किशोर के चेहरे-चेहरे किसके चेहरे' इस नाटक में राजनीतिक धोकेबाजी को स्पष्ट किया गया है। साथ ही सत्ता की हुकूमत के खिलाप विरोधी विचारों को दर्शाया है। इस नाटक का महान चेहरे सत्ता का प्रतीक है। जिसके आदेश से सब काम करते है। महान चेहरे के किसी भी हुक्म को मानना

---

35. आकल्प - वार्षिकी - 1978, पृ.38
36. गिरिराज किशोर - 'प्रजा ही रहने दो', पृ.72

ही पडता है। एक, दो,तीन ये पात्र सत्ता के आदेश, दुरादेश की चर्चा करते हुए कहते है कि - "एक आदेश होता है। दुसरा दुरादेश। आदेश का एक बार उल्लंघन किया जा सकता है। दूरादेश का... रामभजों हा। प्रशासन, कुशासन और शवासन का आधार दुरादेश ही है। हमें तत्काल उनसे बचने का प्रयत्न करना चाहिए।"[37]

सत्ता की हुकूमत का पता चलता है। जिसके दबाव में न रहने के लिए चेतित होकर एक और तीन हुकूमत से बचने के प्रयास करते है। यहाँ जनता में सत्ता के खिलाप विद्रोह चेतना जाग्रत होती नजर आती है। अंत में हम कह सकते है कि गिरिराज किशोर की राजनैतिक चेतना अत्यंत पुष्ट है। सामाजिक चेतना के एक अनिवार्य घटक के रूप में राजनैतिक चेतना का चित्रण उन्होंने पूर्ण सजगता से किया है।

निष्कर्ष -

निष्कर्षतः कह सकते है कि चेतना शब्द बड़ा ही व्यापक है। मानव की प्रमुख विशेषता चेतना है। किसी भी प्रकार का ज्ञान, जाग्रति चेतना है। चेतना बुद्धि या मन की वह वृत्ति है, जो भावों विचारों अनुभव, घटनाओं आदि की जानकारी देती है। चेतना के कारण समाज और मनुष्य में परिवर्तन होता है। चेतना में होनेवाले क्रियाकलाप मनुष्य शरीर को प्रभावित करते है। चेतना समाज सापेक्ष होती है। विविध क्षेत्रों में चेतना का स्वरूप अलग-अलग परिलक्षित होता है। ज्यादातर अपने हक्क और अधिकार के लिए मनुष्य चेतित हो जाता है।

सामाजिक चेतना एक मानव प्रतिक्रिया, सामाजिक संकल्पना बनती है। युगीन चेतना को वाणी देने का कार्य साहित्य, साहित्यकार करता हैं। अतः चेतना अनुभूतिजन्य भाव होने के कारण हर समय उसे व्यक्त करना भी साहित्य कर्म है। कार्यशीलता चेतना की विशेष प्रवृत्ति है। यह मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति है। कर्म उनका अस्तित्व, कार्यशीलता धर्म बना है। चेतना मानव के अस्तित्व का सहज रूप है। अस्तित्व की रक्षा करना, अनुभव को प्रकट करना यही उद्देश है।

सामाजिक चेतना एक महत्वपूर्ण चेतना है क्योंकि हरक्षेत्र समाज से

---

37. गिरिराज किशोर - 'चेहरे-चेहरे किसके चेहरे',पृ.204

जुड़ा होता है। इस कारण समाज में किसी भी क्षेत्र में चेतना जाग्रत होनेपर वह क्षेत्र प्रगति की ओर बढता है। जिससे समाज की प्रगति भी निहित होती है। आजकल पारिवारिक रिश्तों में होता परिवर्तन चेतना का ही परिणाम है। वैचारिक भिन्नता, अस्तित्व की रक्षा नई और पुरानी पीढ़ी का संघर्ष आदि चेतना के ही कारण हो रहा है। दांपत्य जीवन में भी दरारे पैदा हो रही है। पति के अन्याय के खिलाप लडती नारियाँ दिखाई दे रही है। पुरुष का विरोध कर अपने हक और अस्तित्व एवं अधिकार की रक्षा के लिए नारी सजग हो गयी है। प्रस्तुत नाटकों में द्रौपदा, आशा ये नारियाँ इसके उदाहरण है। नारी चेतना यह समाज परिवर्तन का महत्त्वपुर्ण अंग है। समाज, परिवार, पति के अन्याय, अत्याचार का विरोध करने की चेतना नारी के मन में जाग्रत हो रही है। नारी अब अबला नहीं सबला बन गयी है। आज की नारी अत्यंत संघर्षशील है। आलोच्य नाटकों में द्रौपदी, सुलभा, उम्मेदी, आशा अन्याय के खिलाप विद्रोह करती है। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए बंधनों को तोड़ना चाहती है। ये नारी चेतना ही है।

भ्रष्टाचार को पूर्ण रूप में मिटाने के लिए लोगों में रिश्वत लेने और देने के खिलाफ चेतना जाग्रत होनी जरूरी है। भ्रष्टाचार जैसी गंभीर समस्या के विरोध का संदेश रजनीकांत के माध्यम से गिरिराज किशोर ने बडी मार्मिकता से दिया है। जातीय संघर्ष सामाजिक चेतना में महत्त्वपूर्ण है। जातिय संघर्ष में सुधारात्मक प्रक्रिया जरूरी है। आर्थिक चेतना एक सामाजिक चेतना में महत्त्वपूर्ण है। जो समाज में आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए प्रेरित करती है। मनुष्य इस चेतना से चेतित होकर आर्थिक परिवर्तन करता है। आर्थिक चेतना पंडित ख्यालिराम के उदाहरण से स्पष्ट होती है।

गिरिराज किशोर ने अपने नाटकों से राजनीतिक माहौल में भ्रमित आम आदमी को राजनैतिक समझ देने की निरंतर कोशिश की है। राजनीतिक के दुष्चक्र में पिसती कराहती और विद्रोह के लिए उत्तारू जनता का सहज और स्वाभाविक चित्रण किया है। अगर चेतना सही रूप में न हो तो समाज पर इस का बुरा असर भी होता है।

सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, पारिवारिक चेतना के कारण राष्ट्रीयता एकता, सर्वधर्मसमभाव का निर्माण होगा। साहित्यकारों का इस क्षेत्र में महत्त्वपुर्ण योगदान रहा है। उनके पात्र उनके आदर्शों विचारों के प्रतीक होते है। समाजहित, सामाजिक स्वास्थ्य के लिए साहित्य उपादेय रहा है। समाज एवं राजनीति का चित्रण करके उसमें आनेवाले परिवर्तनों का वर्णन किया जाता है जिससे 'चेतना' के विविध आयाम स्पष्ट होते है। इस दृष्टि से गिरिराज किशोर का नाटय संसार महत्त्वपूर्ण है।

गिरिराज किशोर ने अपने नाटकों में सामाजिक चेतना के विविध आयामों को बड़ी ही सजगता, सरलता और मार्मिकता से चित्रित किया है। ऐसा लगता है उनकी रचनाए सिर्फ मनोरंजन ही नहीं बल्कि सामाजिक उपादेय है। परिस्थिति से संघर्ष करनेवाले पात्र अपनी अस्मिता की रक्षा करनेवाली नारी, पति के अन्याय सहती नारी, पति-पत्नी के टूटते-बदलते संबंध आदि पर भी गिरिराज किशोर ने विचार करके सामाजिक सुधार के उपायों की ओर संकेत किया है। जैसे भ्रष्टाचार रोकना, रिश्वत को नकारना, नारी अधिकारों की हिफाजत करना, पति-पत्नी के बीच आपसी स्नेह होना, राजा-प्रजा के बीच समन्वय होना आदि आलोच्य नाटक सामाजिक चेतना, समाज जाग्रती के लिए महत्त्वपूर्ण है। उपादेय है।

****